New prikarama page 1-19.qxd 12/29/2011 4:36 PM Page 26

क्या विज्ञापन एक कला है

समाचारपत्र-पत्रिकाओं व टेलीविजन से लेकर सड़क के किनारे खड़े हर पोल पर, हर दीवार, हर पेड़, हर इमारत, हर सार्वजनिक वाहन, हर पुलिया, हर ढाबा, हर दुकान पर विज्ञापन दिखाई देगा। यही नहीं हमारे खेल, संगीत-नृत्य-सांस्कृतिक कार्यक्रम से लेकर धार्मिक आयोजनों व मेलों पर विज्ञापन का कब्जा है।

■ **मनोज सिंह**

पूंजीवाद ने अगर किसी एक क्षेत्र को सबसे ज्यादा प्रोत्साहित किया है तो वो है विज्ञापन का क्षेत्र। लेकिन यहां चेला गुरु से ज्यादा तेज निकला। वो निर्भर तो पूरी तरह पूंजीवाद पर है मगर चारों ओर ऐसा छा गया कि लगता है मानो विज्ञापन का ही साम्राज्य है। इस हद तक कि वर्तमान युग को विज्ञापन का युग कहा जाने लगा। समाचारपत्र-पत्रिकाओं व टेलीविजन से लेकर सड़क के किनारे खड़े हर पोल पर, हर दीवार, हर पेड़, हर इमारत, हर सार्वजनिक वाहन, हर पुलिया, हर ढाबा, हर दुकान पर विज्ञापन दिखाई देगा। यही नहीं हमारे खेल, संगीत-नृत्य-सांस्कृतिक कार्यक्रम से लेकर धार्मिक आयोजनों व मेलों पर विज्ञापन का कब्जा है। मनोरंजन की दुनिया तो विज्ञापन पर ही टिकी है ऊपर से इसने हमारे त्योहारों, रीति-रिवाजों व सामाजिक व्यवहार पर भी अपना प्रभाव दिखाना शुरू कर दिया है। हमारे आपसी संबंधों, विचारों, भावनाओं व दृष्टिकोण पर भी इसका असर है। आज इस क्षेत्र में इतना पैसा लगाया जाता है कि इसकी कोई सीमा नहीं। कहा तो यह भी जाता है कि किसी-किसी प्रोडक्ट को बनाने में लगाये गए मूलधन से अधिक उसको बेचने के विज्ञापन पर खर्च किया जाता है। यह कितना सत्य है दावे से तो नहीं कहा जा सकता लेकिन नजारा देखकर यह गलत भी नहीं लगता। आज विज्ञापन पर जमकर प्रहार भी किए जा रहे हैं लेकिन इसकी इतनी आलोचना होने से यह प्रमाणित तो हो ही जाता है कि यह महत्वपूर्ण और विशिष्ट बन चुका है। तभी तो व्यवसाय ही नहीं, सरकार से लेकर धर्म को भी अपनी बात समाज तक पहुंचाने में इसकी मदद लेनी पड़ती है। अच्छा है कि इसे स्वीकार करके

इसके उजले पक्ष को देखा जाए और नकारात्मक पक्ष को रोकने की कोशिश की जाए।

सरल शब्दों में विज्ञापन को अपनी बात कहनी आनी चाहिए या फिर और सीधे-सीधे कहे तो अपना ख्याल बेचना आना चाहिए। बिकने वाला ख्याल यहां यह विचार भी हो सकता है, भावना व दृष्टिकोण व नीति भी, जीवनदर्शन और दिनचर्या भी। यह सत्य है कि देखने-पढ़ने वाले को किस प्रकार आकर्षित करना है, विज्ञापन को यह समझना चाहिए। विज्ञापन के शुद्ध व्यावसायिक उद्देश्य को नकारा नहीं जा सकता, तभी तो सामने वाले को अपने जाल में कैसे फंसाना है और उसे उपभोक्ता व ग्राहक बनाना उसे आना चाहिए। बाजार गए हुए हर आदमी को खरीदने के लिए मजबूर कर देने में ही उसकी जीत है। इसे बाजार की भीड़ से अलग दिखना भी है और पहचाना जाना भी है। इसे अपनी बात आमजन को सुनने-पढ़ने-देखने के लिखना और प्रेरित करना आना चाहिए। इसे दिल को छूने वाला और दिमाग को प्रभावित करने वाला होना आवश्यक है। इसे ग्राहक की सोच को बदल देने वाला गुण होना चाहिए। इसे यूं भी कहा जा सकता है कि अपने सामने वाले की

New prikarama page 1-19.qxd 12/29/2011 4:36 PM Page 27

जरूरत को महसूस कराना आना चाहिए। और साथ ही सामने वाले के मन में स्थायी रूप से बसना भी आना चाहिए। इसे यह भी सिद्ध करना होता है कि वो जो कह रहा है सत्य है। अर्थात प्रासंगिकता झलकनी चाहिए। इसे अपने उपस्थिति का अहसास कराना है। अपने अस्तित्व को स्थापित करना है। अब इतने सारे कार्य, वो भी गरीब-अमीर, पढ़ा-लिखा-अनपढ़, स्त्री-पुरुष, बच्चे-जवान-बूढ़े, खूबसूरत-बदसूरत हर शख्स को ध्यान में रखकर करना, क्या यह आसान काम लगता है? बिल्कुल नहीं। यकीनन विज्ञापन का प्रभाव क्षेत्र व विचार क्षेत्र असीमित है।

उपरोक्त व्यापकता से प्रश्न उठता है कि क्या विज्ञापन एक कला है? बिल्कुल। इसमें परिवर्तन की शक्ति है। उपरोक्त कार्य सूची देखकर यह आसानी से कहा जा सकता है। यही नहीं साहित्य है, दर्शन है, भाषा है, समाजशास्त्र है, अर्थशास्त्र है, चित्रकारी-फोटोग्राफी और कल्पनाशीलता है। यहां सृजन की मौलिकता है और सबसे अहम बात थोड़े में बहुत कहने की क्षमता है। हर एक विज्ञापन एक कहानी है अर्थात यह कथा साहित्य की लघुकथा है। इसके काव्यात्मकता को तो कविता की हाइकू विधा का नाम दिया जा सकता है। इसे जीवन के खालीपन भरे जाते हैं। भावनाओं को उकेरा जाता है। दुखों को सहलाया जाता है। संवेदनाओं को सहेजा जाता है। रिश्तों की संवेदना से बहुत कुछ कहा जाता है। इसके द्वारा एक तरफ बंधन की की डोर बांधी जाती है तो दूसरी ओर अभिलाषाऐं व ख्वाहिशों को प्रेरित किया जाता है। मन की चाहत को हवा दी जाती है। आशा को जगाया जाता है। यहां तक तो सब ठीक है, मुश्किल तब शुरू होती है जब अधिक से अधिक सफलता पा लेने के लिए, प्रतिस्पर्धा के कारण, गलत बातों का सहारा लिया जाने लगता है। जैसे कि इसके माध्यम से झूठ, धोखा, फुसलाना आदि। और यह काम बड़ी सफाई से किया जाता है। और यहां से प्रारंभ होता है इस कला का नकारात्मक पक्ष। ठीक उसी तरह जिस तरह चोरी करना भी तो एक कला है मगर यह समाज के लिए तो अहितकारी है।

विज्ञापन ने हमारे सामाजिक जीवन में घुसपैठ की है तो परिवार के हर रिश्तों के भीतर तक जा पहुंचा है। घर की दीवार तोड़कर नहीं, बकायदा दरवाजों से शयनकक्ष व रसोईघर से लेकर स्नानघर तक पहुंच चुका है। कोई माने न माने आज के युग पर विज्ञापन का शासन है। राजनीति तक में यह पूरी तरह हावी है। आप इसकी सहायता से चुनाव जीत भी सकते हैं और किसी का जीता -जिताया चुनाव हरा भी सकते हैं। इस मुद्दे पर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया व समाचारपत्रों में एक वर्ग द्वारा विशेष चर्चा भी कराई गई। कहा गया कि कुछ लोगों द्वारा कुछ उम्मीदवारों के एक तरफा समाचार छापे गए और प्रजातंत्र के मूल सिद्धांत को कमजोर किया गया। नागरिक भ्रमित हुए और चुनाव गलत तरीके से हुआ। यहां सिर्फ नागरिक को सीधे-सीधे दोष देना उचित नहीं। यह विज्ञापन के प्रभावशाली होने का प्रमाण भी है। इस तथ्य को स्वीकार करना होगा कि कितने असरदार ढंग से वो कार्य कर गया। मगर यह पूरी तरह तर्कसंगत नहीं क्योंकि यह विज्ञापन समाचार बनके टीवी और समाचारपत्रों में छाए रहे और भोले-भाले नागरिक इसे समझ न सके। अर्थात एक तरह का विश्वासघात। और यहीं से शुरू होता है कला के दुरुपयोग का अध्याय। जहां यह पुनः प्रमाणित होता है कि शक्ति के साथ शैतान भी पनपता है।

विज्ञापन में एक अस्त्र बड़े सामान्य रूप से इस्तेमाल में लाया जाता है। किसी एक का व्यक्तित्व विशिष्ट व लोकप्रिय बना दिया जाता है। उसको इतने ऊपर आसमान पर चढ़ा दिया जाता है कि वह स्वप्नलोक का लगने लगता है। उसके प्रति जिज्ञासा को बढ़ाया जाता है। उसकी हर बात पर चर्चा करवाई जाती है। और एक बिंदु पर आकर उसकी कही गई बातें लोगों को आकर्षित करने लगती हैं। वह लोगों को लुभाता है। वो चीजों को खरीदने के लिए प्रेरित करता है। इस कार्य को सफलतापूर्वक अंजाम देना भी क्या कला नहीं है? यकीनन। वो दीगर बात है कि ऐसा होने पर, जबकि यह सच है कि जहां लगभग आधी आबादी निरक्षर हो, वो उसकी झूठी बातों में भी आसानी से आ जाती है।

विगत दिवस एक राष्ट्रीय समाचारपत्र के प्रथम पृष्ठ पर एक खबर छपी। यह एक लोकप्रिय खिलाड़ी से संबंधित थी। खबर पर विश्वास करें तो लिखा गया था कि उसे अपने गृह राज्य में मात्र सौ रुपए का जुर्माना लगाया गया था। वो भी शायद इसलिए कि उसने करोड़ों रुपए से खरीदी गई बेहतरीन कार का रजिस्ट्रेशन कराने में देरी की थी। यहां सवाल उठता है कि क्या यह खबर है? और अगर यह खबर यह दिखाने के लिए है कि प्रशासन कितना चुस्त-दुरुस्त है और सबको समान रूप से देखता है तो यह सत्य नहीं चूंकि खबर से ऐसा कुछ आभास नहीं हो रहा था।

और अगर ऐसा सच है भी तो क्या उसके लिए समाचारपत्र के प्रथम पृष्ठ पर होना जरूरी था? क्या यह इतनी महत्वपूर्ण खबर है?

सामान्य रूप में देखें तो इसके माध्यम से एक बार फिर उस खिलाड़ी का नाम समाचारपत्र के प्रथम पृष्ठ पर आया, उसकी चर्चा हुई। करोड़ों पाठकों ने पढ़ा और वह जाने-अनजाने ही खबर बनाने वाला एक मुख्य व्यक्ति बन गया। उस स्थान पर जहां यह समाचार छपा उसकी कीमत चाहे जो हो मगर पाठकों को जो यह समाचार पढ़ाया गया उसकी कीमत नहीं लगाई जा सकती। क्या इसमें कोई संदेश है? सूचना है? नैतिकता है? विषय-वस्तु है? नहीं। फिर जिस ढंग से लिखा गया था उससे जनता को आगाह करने वाली बात भी दिखाई नहीं देती।

ध्यान से देखें तो मीडिया के द्वारा विज्ञापन के सितारों को चर्चा में बनाए रखने का यह एक जाना-पहचाना अप्रत्यक्ष तरीका हो गया हहै। जाने-अनजाने ही एक खिलाड़ी, एक और दिन चर्चित रहा, अपने खेल के कारण नहीं सौ रुपए जुर्माना देने के कारण, और ये बात उसे करोड़ों कमाने में सहायक बनेंगी।

इसे विज्ञापन शास्त्र की नयी योजनाबद्ध रणनीति कहा जा सकता है। इसे विज्ञापन के आधुनिक गुरु कला का एक नया प्रयोग कर सकते हैं। बहरहाल, इस काम के लिए सैकड़ों विज्ञापन एजेंसियां सक्रिय हैं, कई दिमाग लगे हैं। लेकिन क्या यह उचित है? शायद नहीं।

इसे बुद्धि का दुरुपयोग कहा जाना चाहिए। जहां भी समाज के अहित की आशंका होती है वहीं से मकसद पर शंका होने लगती है। यहां विचारधाराएं दूषित होने लगती हैं। और यह विज्ञापन के क्षेत्र में इस हद तक हो चुका है कि लोगों ने चर्चा में बने रहने के लिए रिश्तों को भी बनाना और बिगाड़ना शुरू कर दिया है। ऐसे कई संबंध हैं जो कभी बने ही नहीं और उन्हें जबरदस्ती पैदा किया गया। बनया गया। उसे एक बार जोड़ा गया और फिर तोड़ा गया। और इस तरह से कम से कम महीने दो-चार महीने चर्चा में बने रहने का पूरा इंतजाम तो हो ही गया।

वैसे तो यह भी कला है लेकिन जब तरीके (रास्ते) गलत इस्तेमाल होने लगते हैं तो अंतिम परिणाम भी गलत ही होगा। कलाकार यह भूल जाता है कि जिस समाज-परिवार में वह रह रहा है, उसे दूषित करने पर, उसका खमियाजा उसे भी भुगतना पड़ेगा। ऐसा ही कुछ हो रहा है। यह सत्य है कि भावनाओं के साथ आसानी से खेला जा सकता है। मगर इसका इस्तेमाल ज्यादा दिनों तक नहीं किया जा सकता। शक्ति निर्माण करती है तो दुरुपयोग से विध्वंस का कारण भी बन जाती है। भस्मासुर का उदाहरण यहां सटीक बैठता है जिसने अपनी अर्जित शक्ति से अपने हाथों अपना ही सर्वनाश कर लिया था। ■ *(लेखक स्तंभकार हैं।)*